दलितों व शोषितों का पाक्षिक पत्र

हिमायती

सम्पादक–डॉ0 सोहनपाल सुमनाक्षर

□ वर्ष 63 □ अंक-20 □ दिल्ली □ जुलाई (द्वितीय) □ मूल्य : 2 रु.

महिला सशक्तिकरण में बाबा साहब डा. अम्बेडकर का योगदान

• डॉ. सुशील कुमार बैरवा
अतिथि व्याख्याता (इतिहास)

मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के भग्नावशेषों में मिट्टी की बहुत सी मूर्तियां मिली हैं, जिनसे ये अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है कि इस युग में नारी को देवी मान कर पूजा जाता था। सत्यकेतु विद्यालंकार ने अपनी पुस्तक प्राचीन भारत में लिखा है, ''... इनमें से एक प्रकार की स्त्री मूर्ति विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि ऐसी मूर्तियां बहुत बड़ी संख्या में वहां उपलब्ध हुई हैं। यह स्त्री मूर्ति प्रायः नग्न दशा में बनाई गई हैं, यद्यपि कमर के नीचे जांघों तक एक प्रकार का कपड़ा भी प्रदर्शित किया गया है। मूर्ति पर बहुत से आभूषण अंकित किए गए हैं और सिर की टोपी पंखे के आकार की बनाई गई है, जिसके दोनों ओर दो प्याले या दीपक हैं। ऐसी अनेक स्त्री मूर्तियों में दीपक के बीच में धूप के निशान हैं, जिनसे यह सूचित होता है कि इनमें तेल या धूप जलाई जाती थी। धूम्र की सत्ता इस बात का प्रमाण है कि ये स्त्री मूर्तियां पूजा के काम में आती थीं। संसार की प्रायः सभी प्राचीन सभ्यताओं में मातृ देवता की पूजा की प्रथा विद्यमान थी।''

मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की सभ्यता में नारी के अधिकार व उसकी स्थिति के पर्याप्त प्रमाण नहीं मिलते हैं, किंतु जो मिलते हैं, उसके आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय नारी की स्थिति अच्छी थी। संभवतः उस समय मातृसत्तात्मक परिवार थे। आज भी भारत के कुछ हिस्सों, यथा–आसाम, केरल आदि राज्यों में मातृसत्तात्मक परिवार मिलते हैं।

मातृसत्तात्मक परिवारों में गृहस्थी का पूर्ण संचालन नारी द्वारा ही किया जाता है। वंश–परिवार सभी नारी के नाम से ही चलते हैं। ऐसे परिवारों की मुखिया भी नारी ही होती हैं। इससे यह अनुमान तो लगाया ही जा सकता है कि नारी प्रतिभा संपन्न एवं सक्षम तो है ही, किंतु जानबूझकर उसे हीन एवं दयनीय बनाया गया है। जानबूझकर ही राष्ट्रघाती शक्तियों ने राष्ट्र के आधे अंग को पंगु बनाकर राष्ट्र को अवनति की ओर धकेला है। आज राष्ट्र के पतित होने का एक बड़ा कारण नारी प्रतिभाओं का राष्ट्र को समुचित लाभ नहीं मिलना रहा है।

वैदिक काल में नारी की स्थिति कभी एक सी नहीं रही। ऋग्वेद के प्रारंभिक मंत्रों में नारी के सम्मान तथा अधिकारों पर विशेष बल दिया गया है। ऋग्वेद के प्रारंभिक मंत्रों में नारी की शक्ति, सामर्थ्य और अधिकारों का वर्णन है। पुत्री की हैसियत से पिता की संपत्ति में उसका हक है। युवती की हैसियत से वह अपना पति आप चुनती है। ऋग्वेदकाल में नारी पुरुषों की भांति शस्त्र चलाना सीखती थी, युद्ध में जाती थी, शास्त्रार्थ करती थी। संपूर्ण गृह विधान उसके हाथ में था। पति के साथ साधिकार यज्ञानुष्ठानों में भाग लेती थी। यह युग मानव सभ्यता के विकास का युग था। उत्तर वैदिक युग में वर्ण व्यवस्था का विकास नहीं हुआ था। इस युग में अनुलोम विवाह (अपने से निचले वर्ण की कन्या के साथ विवाह) की प्रथा भी प्रचलित थी। शूद्र कन्याओं को अनेक संपन्न पुरुष 'रामा' (रमणार्थ) के रूप में अपने घरों में रखते थे। शूद्र वर्ण आर्यविशः से पृथक था, फिर भी यदि कोई शूद्र विशिष्ट रूप से धार्मिक विद्वान व दक्ष हो, तो समाज में उसका आदर होता था। ऐतरेय ब्राह्मण में कथा आती है कि ऋषि लोग सरस्वती नदी के तट पर यज्ञ कर रहे थे। उस समय 'ऐलूष कवष' नाम का व्यक्ति उनके बीच में आ बैठा। तब ऋषियों ने कहा–''यह दासी का पुत्र अब्राह्मण है, हमारे बीच में कैसे बैठ सकता है।'' बाद में ऋषियों ने कहा–''यह तो परम विद्वान है, देवता लोग भी इसे जानते और मानते हैं।''

प्राचीन भारतीय इतिहास के अनेक विद्वानों ने मध्ययुग में भारत की स्त्रियों की हीन स्थिति को ध्यान में रखकर यह कल्पना की है कि प्राचीन युग में भी उनकी सामाजिक स्थिति हीन थी। परन्तु इस युग के साहित्य के अनुशीलन में इस मंतव्य की पुष्टि नहीं होती।

वैदिक और उत्तर वैदिक युग

जहां स्त्रियां ऋषि व ब्रह्मवादिनी हो सकती थीं, वहां

(शेष भाग... पृष्ठ 5 पर)

सम्पादकीय

सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन में दलित साहित्यकारों की भूमिका

• डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर

भारत देश की सामाजिक व्यवस्था मनुस्मृति की वर्ण व्यवस्था पर आधारित है। इसके अन्तर्गत समाज में ब्राह्मण सर्वोच्च पहले स्थान पर, क्षत्रिय दूसरे स्थान पर, वैश्य तीसरे स्थान पर और शूद्र चौथे स्थान यानी सबसे नीचे हैं। ब्राह्मणों का काम शिक्षा देना और मनुस्मृति के दंड–विधान को लागू कराना था, वहीं क्षत्री का देश की सुरक्षा और शासन चलाना था और वैश्य का काम खेती–बाड़ी व व्यापार करना था। ये उपरोक्त तीनों श्रेणी 'द्विजों' की थी। शूद्र का काम उपरोक्त तीनों श्रेणी के लोगों के सेवा करना और उनकी हुक्म–अदुली करना था। इन्हें शिक्षा प्राप्त करने, धन अर्जित करने और स्वतंत्र जीवन जीने का निषेद्ध था। शूद्रों को भी दो भागों में बांटा गया था–सछूत और अछूत। शूद्रों के सछूत वर्ग में वे लोग आते थे जो द्विजों के चौखट (घर) के अन्दर जा सकते थे और अछूत वर्ग के लोगों को उनकी चौखट से दूर गांव से बाहर रहने का प्रावधान था। इन अछूतों के छू जाने को पाप माना जाता था और इनकी छाया से दूर बचकर रहना शुभ माना जाता था। इनका दिन में घर से बाहर निकलना निषेद्ध था, सिर्फ रात को ही इन्हें घूमने–फिरने का विधान था। पेशवाओं के राज में अछूतों को रात के अन्धेरे में गले में थूकने के लिए हांडी व पीठ पीछे झाड़ू बांधकर चलने का प्रावधान था ताकि उनके पांव के निशान से अपवित्र हुई जमीन झाड़ू के साथ– साथ शुद्ध हो जाए।

मनुस्मृति की यह वर्ण व्यवस्था पिछले पांच हजार साल से देश का भारतीय संविधान 26 जनवरी, 1950 को लागू होने तक लागू रही। इस वर्ण–व्यवस्था के कारण 15 प्रतिशत द्विजों ने 85 फीसदी शूद्रों (दलितों) को बंधुआ, दास व गुलाम बनाये रखा ओर देश की सत्ता व सम्पदा पर एकाधिकार बनाये रखा। यही नहीं, द्विजों ने शूद्र–अछूतों पर अपनी पूर्ण एकाधिकार कायम रखने के लिए उन्हें अनेक जाति व उपजातियों में बांट दिया और उन पर कर्तव्यों के नाम पर सख्त से सख्त व घृणित काम थोप दिये। इसका यह परिणाम निकला कि समाज हजारों जातियों व उपजातियों में बंट गया और शूद्र वर्ण की प्रत्येक जाति व उपजाति अपने को 'ऊंची' व दूसरी जाति को 'नीची' जाति समझने लगी। यह सब इसलिए किया गया ताकि शूद्र जातियां एकजुट होकर, मुट्ठी भर सवर्णों के विरुद्ध विद्रोह न कर सकें।

इसके साथ ही ब्राह्मणों ने पुनर्जन्म, भाग्य–भगवान, पाप–पुण्य, धर्म–कर्म, स्वर्ग–नरक की 'थ्योरी' घड़ी और उन्हें भी अपने शास्त्रों में शामिल कर इसे भगवान निर्मित घोषित किया। मनुस्मृति को भी भगवान मनु का विधान बताकर

(शेष भाग... पृष्ठ 3 पर)

भारतीय दलित साहित्य अकादमी के प्रकाशन

विश्व धरातल पर दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अंधा समाज और बहरे लोग	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
सिन्धु घाटी बोल उठी	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अब नहीं रहेंगे हाशिये पर	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अम्बेडकर शतक	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
विश्व विभूति डा. अम्बेडकर	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
दलित लेखक परिचय ग्रंथ (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	250/–
बुद्धा दू अम्बेडकर (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	150/–
दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अम्बेडकर दर्शन	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
हमारे संत और समाज सुधारक	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
धर्म और समाज	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
आदिम जाति चमार (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	300/–
दलित उद्घोष	डा. सुमनाक्षर	100/–
दलित साहित्य की हुंकार–सात समन्दर पार	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
युगपुरुष बाबू जगजीवनराम	डॉ. सुमनाक्षर	200/–
प्राचीन आदिम जाति वाल्मीकि (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
मेरे साक्षात्कार–मेरा जीवन संघर्ष	डा. सुमनाक्षर	300/–
सभ्यता, संस्कृति, समाज और साहित्य	आचार्य गुरुप्रसाद	100/–
भारत रत्न डा. बी.आर. अम्बेडकर	राजमल 'राज'	100/–
मूल भारती से दलित	राजमल 'राज'	100/–
अम्बेडकरवाद बनाम सामाजिक परिवर्तन	राजमल 'राज'	100/–
दलित साहित्य–दशा और दिशा	डा. माता प्रसाद	200/–
दलित साहित्य से सामाजिक परिवर्तन	डा. माता प्रसाद	100/–
भारत की गुलामी के 22 सौ साल	प्रदीप कुमार मौर्य	250/–
बौद्ध धर्म–गया से अयोध्या तक	प्रदीप कुमार मौर्य	120/–
गांधी, अम्बेडकर और दलित	प्रदीप कुमार मौर्य	100/–
हम एक हैं	डा. माता प्रसाद	100/–
रैदास से संत शिरोमणि गुरु रविदास	डा. माता प्रसाद	100/–
ताकि सनद रहे	डा. सुमनाक्षर	200/–
Who's who Dalit Writers in India	Dr. Sumanakshar	500/-
Who's Who–International & National Awardees of B.D.S.A.	Dr. Sumanakshar	500/-

पुस्तक मंगाने के लिए अग्रिम राशि निम्नलिखित अकादमी के खाते में भेजें

Bharatiya Dalit Sahitya Akademi
A/c No. - 2592101012292 (Canara Bank)
IFSC - CNRB0002592
Branch - Model Town, Delhi

सम्पादकीय का शेष...सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन में दलित साहित्यकारों की भूमिका

शूद्रों को उस पर विश्वास करके स्वीकारने और उस पर अमल करने को अपना धर्म मानने को बाध्य किया। यही नहीं, मनुस्मृति में सवर्णों (द्विजों) के लिए अलग दंड विधान और शूद्रों के लिए अलग दंड विधान का प्रावधान किया और उसके उल्लंघन व विरोध करने पर अंग–भंग व मृत्युदंड जैसा विधान रखा।

इस ब्राह्मणवादी षड्यंत्र ने समाज को हजारों जातियों व उपजातियों में बांट दिया और प्रत्येक जाति अपने को ऊंची और दूसरी को नीची समझने लगी। देश की सत्ता व सम्पदा पर केवल मुट्ठी भर द्विजों (सवर्णों) का कब्जा रहा और देश की 85 फीसदी शूद्र (दलित) दासता व गुलामी को अपना कर्त्तव्य समझकर निभाते रहे और बिना अपने किसी 'अधिकार' की सोचे उनकी गुलामी में जुटे रहे। सदियों से शिक्षा से वंचित रहने के कारण उनकी विचारशक्ति व तर्कशक्ति ही खत्म हो गई और जो ब्राह्मणों ने उन्हें बताया उसे ही उन्होंने अपनी नियति समझ लिया। उन्होंने यह समझ लिया कि यह पूर्व जन्म के पापों का फल है जो हम 'नीच जात' में पैदा हुए हैं। अब हमें अपने मालिकों की हुक्म–अदुली करके अच्छी सेवा करनी है ताकि हमारा अगला जन्म सुधर सके। सवर्णों का अत्याचार सहना हमारा कर्त्तव्य है।

इस तरह सदियों से अज्ञानता के कारण दलित समाज ब्राह्मणों के कर्मकांड, पाखंड, धर्मान्धता में फंसा अधिकारविहीन जीवन जीते हुए क्रूर से क्रूर अत्याचार सहता रहा। उसे न मानवीय जीवन जीने का अधिकार था और न ही सम्मान व समानता की बात करने का। ब्राह्मणवादी इस वर्ण व्यवस्था के खिलाफ सबसे पहला शंखनाद भगवान बुद्ध ने किया, जिन्होंने कहा कि शिक्षा पाने का सबको बराबर का अधिकार है। उन्होंने अछूतों के लिए भी बौद्ध विहार के द्वार खोल दिए, पर बौद्ध धर्म के पतन व पलायन के बाद ब्राह्मणवाद फिर हावी हो गया और वर्ण व्यवस्था व जात–पांत का और कठोरता से पालन शुरू हुआ। इससे दलित अछूत जातियों का जीवन और दूभर हो गया। उन्हें शिक्षा, सम्पत्ति, सत्ता के अधिकारों से वंचित करके सवर्णों की दया पर जीने को बाधित कर दिया।

मध्य युग में गुरू रविदास जी ने ब्राह्मणों के गढ़ 'काशी' में इस वर्ण व्यवस्था को खुली चुनौती दी और कहा कि सब इंसान बराबर हैं और सबको सम्मान से जीने का अधिकार है। उन्होंने कहा–

जात पांत पूछे न कोई,
हरि को भजे सो हरि का होई।
जात जात में जात है
ज्यों केलन में पात
'रविदास' मानुस न जुड़ सके,
जब लौं जात न जात।।
चारों वेद करे जो खंडोति,
'रविदास' ताहि करे दंडोति।।

उन्होंने 'दासता' व गुलामी को भी चुनौती दी–

पराधीनता पाप है
जानहि लेओ मेरे मीत।
रविदास दास पराधीन सो
कौन करे है प्रीत।।
पराधीन का दीन क्या
पराधीन बेदीन।
रविदास दास पराधीन को
सभी समझें हीन।।

गुरू रविदास जी ने ब्राह्मणों की उच्चता को भी यों चुनौती दी–

रविदास न ब्राह्मण पूजिये
जो हो गुण हीन।
पूजिये पांव चांडाल के
जो हो ज्ञान प्रवीन।।

इस तरह सामाजिक दशा परिवर्तन का पहला काम दलित समाज के प्रथम साहित्यकार गुरू रविदास जी ने सर्वप्रथम शुरू किया। उन्होंने चित्तौड़ की महारानी झालीबाई व मीराबाई को दीक्षा देकर जहां स्त्रियों को समानता के धरातल पर लाने का काम किया, वहीं 50 के लगभग राजा–महाराजाओं को दीक्षा देकर झोंपड़ियों की पगडंडी को महलों से जोड़कर सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन का काम किया। पर उनके देहावसान के बाद ब्राह्मणवाद ने बदले की भावना से दलितों का दमन प्रारम्भ कर दिया। देश की सत्ता परिवर्तन होने पर राजा, महाराजा, बादशाह कोई भी आये, पर सामाजिक सत्ता पर एकाधिकार ब्राह्मण वर्ग का ही रहता था, इसलिए दलित अछूतों की आवाज कोई सुनने वाला नहीं था।

19वीं सदी में महात्मा ज्योतिबा फुले का अवतरण हुआ। उन्होंने समाज की नब्ज पकड़ते हुए सबसे पहले दलितों की शिक्षा पर जोर दिया। उन्होंने दलितों की शिक्षा के लिए स्कूल खोले। इसमें प्रथम शिक्षिका उनकी धर्मपत्नी सावित्री– बाई फुले बनी। उन्होंने दलितों में जागृति के लिए आह्वान किया–

विद्या बिन मति गई,
मति बिना गति गई,
गति बिना नीति गई,
नीति बिना वित्त गया।
और वित्त बिना सब कुछ गया,
यह सब हुआ एक विद्या बिना।

महात्मा फुले ने ब्राह्मणवादी सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध सत्यशोधक समाज की स्थापना की जिसमें समता, स्वतंत्रता, बन्धुता को प्राथमिकता दी गई। उन्होंने सती प्रथा का विरोध करते हुए विधवा विवाह को प्रोत्साहित किया। 'गुलामगीरी' ग्रन्थ लिखकर गुलामी प्रथा की खुली खिलाफत की।

20वीं सदी में बाबा साहब डा. अम्बेडकर ने संत गुरू रविदास व महात्मा ज्योतिबा फुले के सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन को आगे बढ़ाते हुए वर्ण व्यवस्था, जात–पांत, ऊंच–नीच, भेदभाव पर सीधा प्रहार किया। उन्होंने सवाल किया कि दलित–अछूत जब हिन्दू धर्म के अंग हैं तो उन्हें अन्य हिन्दुओं की तरह बराबरी के अधिकार क्यों नहीं

हैं? उन्होंने दलितों को समानता के अधिकार दिलाने के लिए महाड़ के चोबदार तालाब के पानी पर अछूतों के अधिकार हेतु आन्दोलन शुरू किया और विजय प्राप्त की। इसी तरह नाशिक के कालाराम मन्दिर में दलितों के प्रवेश का अधिकार दिलाने के लिए आन्दोलन शुरू किया और काफी संघर्ष के बाद दलितों को मन्दिर में प्रवेश दिलाया। उन्होंने वर्ण व्यवस्था व सामाजिक विषमता की जननी 'मनुस्मृति' की होली जलाकर सामाजिक समता का नारा बुलन्द किया।

बाबा साहब डा. अम्बेडकर ने लंदन की राउंड टेबुल कान्फ्रेंस में भारत के दलित–अछूतों की दुर्दशा का विहंगम चित्र खींचते हुए अंग्रेजी हुकूमत से कहा कि हमें भी राजसत्ता में अलग से वोट का अधिकार चाहिए। इस पर अंग्रेजी सरकार ने अछूतों को 'कम्युनल अवार्ड' के अन्तर्गत पृथक निर्वाचन क्षेत्र व दो वोट दिये जाने का अधिकार दिया। इससे सामाजिक व्यवस्था पूरी तरह बदल जाने वाली थी, पर गांधी जी ने पूना की यरवदा जेल में इस 'कम्युनल अवार्ड' के विरुद्ध आमरण अनशन करके बाबा साहब डा. अम्बेडकर को इसे अस्वीकार करने को बाधित कर दिया। इसकी एवज में 'पूना पैक्ट' हुआ जिनके अन्तर्गत अछूतों को आरक्षित–निर्वाचन क्षेत्र व सरकार व शिक्षा संस्थानों में उनकी आबादी के अनुपात में आरक्षण दिये जाने का प्रावधान किया गया। देश की आजादी मिलने के बाद जब बाबा साहब डा. अम्बेडकर को भारतीय संविधान निर्माण का काम सौंपा गया तो उन्होंने उसमें समता, स्वतंत्रता व बन्धुता को तो प्राथमिकता दी, साथ ही दलित–अछूतों को समाज की ऊंच–नीच की खाई से बराबर के धरातल पर लाने के लिए निर्वाचन, शिक्षा एवं नौकरियों में आरक्षण का प्रावधान किया और छुआछूत व किसी भी तरह के मानवीय भेदभाव को दण्डनीय करार निर्धारित किया।

बाबा साहब डा. अम्बेडकर ने देश के दलितों को न केवल उनकी सामाजिक व आर्थिक विषम स्थिति से अवगत कराया बल्कि इससे छुटकारा पाने के लिए शिक्षित बनने, संगठित होने व संघर्ष करने का रास्ता भी दिखाया। उन्होंने राजा व रंक, महारानी व मेहतरानी के भेद को मिटाकर सामाजिक विषमता की त्रासदी झेल रहे करोड़ों लोगों को विकास की ओर बढ़ने के लिए बराबरी के अवसर देकर भारतीय दलित जन समुदाय को एक नया जीवन प्रदान किया।

डा. अम्बेडकर राजनीति के महानायक थे। उन्होंने आह्वान किया कि देश के अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग व धार्मिक अल्पसंख्यकों को मिलकर देश की राजसत्ता पर काबिज होना चाहिए, क्योंकि वे देश की आबादी में 85 फीसदी है जबकि शेष 15 फीसदी ब्राह्मणवादी लोग उन पर सदियों से राज कर रहे हैं।

देश 15 अगस्त, 1947 को आजाद हो गया और 26 जनवरी, 1950 को समता, स्वतंत्रता व बंधुता पर आधारित भारतीय संविधान भी लागू हो गया। पर आजादी के 78 वर्ष बीत जाने के बाद भी देश के दलित संविधान की प्रस्तावना के उद्देश्यों को भी हासिल नहीं कर पाये हैं। इसका प्रमुख कारण मनुवादी व्यवस्था तो है ही, पर उससे बढ़कर मनु–मानसिकता के आगे संवैधानिक समता के मौलिक अधिकार तिरोहित होते जा रहे हैं। देश के 6 लाख गांवों में दलित आज भी दोयम जीवन जी रहे हैं। दलितों का नर–संहार, अत्याचार, अपमान, अन्याय, शोषण, दमन आज भी बदस्तूर जारी है। दलित युवक व युवतियों की बेइज्जती, बलात्कार व कत्ल आज आम बात है। दलितों के घरों को आग लगा देना, उन्हें जिन्दा जला देना, खेल–खलिहानों से उन्हें बेदखल करना, कुंओं, तालाबों, रास्तों से उन्हें बेदखल कर उन पर तरह–तरह की पाबन्दी लगा देना, आज हर रोज की बात है।

अब बाबा साहब डा. अम्बेडकर की प्रेरणा से दलित साहित्य विभिन्न विधाओं में, सभी भाषाओं में अपने उभार पर है। दलित साहित्यकार अपनी आत्मकथाओं व अपनी अन्य रचनाओं में सामाजिक विषमता, अन्याय, अत्याचार पर खुलकर लिख रहे हैं, उससे दलित समाज में अपने अधिकारों के प्रति चेतना तो जागृत हुई है, पर उनका यह दलित साहित्य का हथियार सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन में कोई ज्यादा कारगर सिद्ध नहीं हुआ है, क्योंकि एक अकेली बहन मायावती के मुख्यमंत्री बन जाने या बहन मीरा कुमार के लोकसभा अध्यक्ष बन जाने, या फिर डा. के.आर. नारायणन व श्री रामनाथ कोविन्द के राष्ट्रपति बनने व श्री के.जी. बालाकृष्णन के सुप्रीम कोर्ट का 'चीफ जस्टिस' बन जाने को हम पूर्ण सामाजिक परिवर्तन नहीं कह सकते। यह एक शुरुआत भर है, एक पहला कदम है सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन की ओर, पर इससे आगे अगर हम मनुवादी व्यवस्था से छुटकारे के लिए और पूर्ण सामाजिक व्यवस्था, बदलना चाहते हैं तो दलित साहित्यकारों को कलम के साथ–साथ बाबा साहब डा. अम्बेडकर के शिक्षा सूत्र के बाद, उनके 'संगठन' व संघर्ष' के मूलमंत्र को हृदयांगम करके उस पर दृढ़ता से अमल करना होगा, वरना सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन में दलित साहित्यकारों की भूमिका अधूरी ही रहेगी। •

हिमायती

हिन्दी पाक्षिक पत्र

अम्बेडकर मिशन का प्रतिनिधि पत्र है। इसे मंगाइये, पढ़िए और दूसरों को पढ़ाइये। इससे जन चेतना जागृत होगी और दलित संघर्ष तीव्र होगा। इसका सहयोग वार्षिक शुल्क 100/- मनीआर्डर से आज ही भेजें–

सम्पादक :
हिमायती
बी 3/9, दूसरी मंजिल,
माडल टाउन-1, दिल्ली-9
मो. 9810278936

पृष्ठ 1 का शेष भाग.....महिला सशक्तिकरण में बाबा साहब डा. अम्बेडकर का योगदान

सर्व साधारण आर्य स्त्रियां 'उपनीत' होकर विद्याध्ययन करती थीं और फिर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करके माता के गौरवमय पद को प्राप्त करती थीं। वैवाहिक जीवन में स्त्री को पुरुष, की सहधर्मिणी माना जाता था। विवाह के अवसर पर पति और पत्नी दोनों ही कतिपय प्रतिज्ञाएं करते थे, जिनका प्रयोजन एक–दूसरे के प्रति कर्त्तव्यों का पालन करते रहने का निश्चय करना होता था। पति या पत्नी बिना किसी असाधारण कारण के अपने जीवन साथी का परित्याग नहीं कर सकते थे। 'आपस्तंब– सूत्र' में लिखा है कि जिस पति ने अन्याय से पत्नी का परित्याग किया हो, वह गधे का चमड़ा ओढ़ कर प्रतिदिन सात गृहों में यह कहते हुए भिक्खा मांगे कि उस पुरुष को भिक्खा प्रदान करो, जिसने अपनी पत्नी को त्याग दिया है। इस प्रकार की भिक्खा से वह पुरुष छः मास तक अपना निर्वाह करे। निःसंदेह यह एक भयंकर दंड था, जो इस युग में पत्नी के साथ अन्याय करने वाले को दिया जाता था।

रामायण काल में नारी की स्थिति

रामायण के अध्ययन से तत्कालीन स्त्रियों की स्थिति के विषय में विभिन्न विचार उपलब्ध होते हैं। प्रथम यह कि इस युग में बहुविवाह की प्रथा प्रचलित थी। ऐक्ष्वाकण–राजा दशरथ की तीन पत्नियों से यह सत्य दृष्टिगोचर होता है। ...रामचंद्र का वनवास अंतःपुर के षड्यंत्र का परिणाम था। जनता की इच्छा के विपरीत कैकेयी इस बात में सफल हुई कि लोकप्रिय युवराज रामचंद्र को राजगद्दी से दूर रख सके। इससे प्रगट है कि इस युग के भारतीय समाज में स्त्रियों की वह उच्च स्थिति नहीं रह गई थी, जो कि वैदिक काल में थी।

इस काल में पुरुष को देवतुल्य माना गया है और नारी को मात्र उसकी छाया–स्वार्थ रहित, पति परायण, तपंस्विनी नारी। वह मात्र पति की सेविका है, दासी है।

महाभारत काल में नारी

भारतीय हिन्दुओं द्वारा महाभारत को 'पंचम वेद' की संज्ञा दी गई है। इसमें भी स्त्रियों का जीवन पराधीन था। गांधारी, कुंती, द्रोपदी, सुभद्रा सभी स्त्री पात्रों का एक ही हाल था।

इस काल में बाल–विवाह की प्रथा का भी प्रारंभ हो गया था। अर्जुन पुत्र अभिमन्यु का विवाह सोलह वर्ष की आयु में हुआ था। अनुशासन पर्व में भीष्म ने व्यवस्था दी है कि 30 वर्ष की आयु का पुरुष 10 वर्ष की कन्या से विवाह कर सकता है और 24 वर्ष का पुरुष 7 वर्ष की बालिका के साथ विवाह कर सकता है। (अनु. 44/42)

इस काल में नियोग की प्रथा भी प्रचलित थी। नियोग के विषय में महाभारत में कहा गया है कि पति के मर जाने पर स्त्री देवर के साथ नियोग करके संतानोत्पत्ति कर सकती है। (अनु. पर्व 44/50, 51) महाभारत में नियोग के अनेक दृष्टांत उपलब्ध होते हैं। यदि पति जीवित हो, तो भी स्त्री पति की अनुमति से नियोग कर सकती थी। पांडवों की माता कुंती ने युधिष्ठिर आदि जो पुत्र उत्पन्न किए थे, वे नियोग द्वारा ही उत्पन्न हुए थे।

नारी मुक्ति और भगवान बुद्ध

सर्वविदित है कि विश्व में सर्वप्रथम स्त्रियों के प्रति यदि किसी के मन में करुणा का संचार हुआ, तो वह भगवान गौतम बुद्ध ही थे। मानवी दुखों में जो सबसे अधिक कठोर दुख है, वह हमें सिर्फ स्त्रियों के रूप में ही दृष्टिगोचर होता है। प्राचीन काल में स्त्री को संन्यास लेने के लिए अपात्र ठहराया गया था, लेकिन आज से 2500 वर्ष पूर्व भगवान बुद्ध ने स्त्री को 'प्रव्रज्या' देकर पुरुष के बराबर लाकर खड़ा कर दिया और 'भद्रे' नामक संबोधन देकर समाज में स्त्री को सम्मान और प्रतिष्ठा देने का महान कार्य किया। इसीलिए भगवान बुद्ध को 'स्त्री–मुक्ति का आद्य प्रणेता' कहा जाता है।

यह सर्वविदित है कि बुद्ध–काल में खेमा, महाप्रज्ञापति गौतमी, यशोधरा, कुंडलकेशा, पटाचारा, दानशूरविशाखा, अम्बपाली, धम्मदिना, उत्पलवर्णा, किसा गौतमी आदि अनेक स्त्रियां प्रख्यात विदुषी और धर्मशास्त्र पारंगत भिक्खुणी के रूप में बौद्ध इतिहास में प्रसिद्ध हुई हैं। इन सभी भिक्खुणियों का जीवन प्रव्रज्या लेने से पहले कितना दुखदायक और कष्टमय रहा और प्रवजित होने और भिक्खुणी बनने के बाद उनका जीवन कितना आनंददायक, शांतिपूर्ण और स्फूर्तिदायक हुआ। इसका इतिहास संक्षिप्त रूप में भिक्खुणियों ने गाथाओं के रूप में वर्णन किया है। इसीलिए वह आद्य कवयित्री कहलाने की हकदार बनीं।

मौर्य काल में नारी की स्थिति

मौर्य काल में बहुविवाह की प्रथा प्रचलित थी। मेगास्थनीज ने लिखा है–''वे बहुत सी स्त्रियों से विवाह करते हैं। विवाहित स्त्रियों के अतिरिक्त अनेक स्त्रियों को आमोद–प्रमोद के लिए भी घर में रखा जाता था। मेगास्थनीज के अनुसार कुछ को तो 'दत्तचित्त सहधर्मिणी' बनाने के लिए विवाह करके लाते हैं और कुछ को केवल आनंद हेतु तथा घर को लड़कों से भर देने के लिए। कौटिल्यीय अर्थशास्त्र से भी इस बात की पुष्टि होती है। वहां लिखा है–''पुरुष कितनी ही स्त्रियों से विवाह कर सकता है। स्त्रियां संतान उत्पन्न करने के लिए ही हैं।''

इस काल में स्त्रियों की स्थिति को उन्नत नहीं कहा जा सकता। विवाहित स्त्रियों को घर से बाहर आने–जाने की स्वतंत्रता नहीं थी। वे पति की इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य भी नहीं कर सकतीं थीं। कौटिल्य ने लिखा है–यदि कोई स्त्री अपने पति के कुल (घर) से बाहर जाए, जो उसे छः पण दंड दिया जाए, परन्तु यदि पतिकुल से बाहर जाने का कारण पति से द्वेष हो, तो वह स्त्री दंड की भागी नहीं होगी। यदि पति ने उसे कहीं बाहर जाने से रोका है और वह फिर भी जाती है, तो उसे बारह पण दंड दिया जाए।

सातवाहन साम्राज्य

मौर्य काल के पतन के बाद सातवाहन साम्राज्य का प्रारंभ होता है। सातवाहन वंश का प्रथम राजा

'सिमुक' था। सिमुक का पुत्र 'सातकर्णी' था। इस समय मातृ सत्तात्मक परिवार थे। इस कारण वह इतिहास में 'गौतमी पुत्र सातकर्णी' के नाम से प्रसिद्ध है। इसने सातवाहन राज्य का बहुत विस्तार किया। उसका विवाह नायनिका या नागनिका नामक कुमारी के साथ हुआ, जो महारठी सरदार की दुहिता थी। इस विवाह के कारण सातकर्णी की शक्ति बहुत बढ़ गई, क्योंकि एक शक्तिशाली महारठी सरदार की सहायता उसे प्राप्त हो गई थी।

गौतमीपुत्र सातकर्णी के उत्तराधिकारियों के केवल नाम ही पुराणों द्वारा ज्ञात होते हैं। इनमें गौतमीपुत्र के संबंध में उसके शिलालेखों से बहुत कुछ परिचय प्राप्त होता है।

गौतमीपुत्र सातकर्णी की माता का नाम 'गौतमी बालश्री' था। उसने नासिक के त्रिरश्मि पर्वत पर एक गुहा दान की थी, जिसकी दीवार पर प्रशस्ति उत्कीर्ण है। इस प्रशस्ति द्वारा गौतमी बालश्री के प्रतापी पुत्र के संबंध में बहुत सी महत्त्वपूर्ण बातें ज्ञात होती हैं। उसने एक विशाल साम्राज्य का निर्माण कर लिया था।

मध्य–युग में नारी की स्थिति

हर्षवर्धन के पश्चात् भारत–भूमि पर बड़े साम्राज्य नहीं बन पाए। छोटे–छोटे राजे महाराजे देश के भिन्न–भिन्न भागों में शासक बनते रहे। कालांतर में यही शासक 'राजपूत' संज्ञा से अभिहित हुए।

पुष्यमित्र शुंग ने सैन्य बल से बौद्धों पर भयंकर अत्याचार किए। तत्पश्चात शंकराचार्य ने राजाओं की सहायता से धार्मिक दिग्विजय प्राप्त की। इसका परिणाम यह हुआ कि तथागत बहु ने नारियों को जिस प्रकार सामाजिक समग्रता प्रदान की थी, वह परंपरा विलुप्त हो गई। 'अष्टाध्यायी' का रचयिता 'पाणिनि' पुष्यमित्र शुंग के काल में हुआ था । तर्क दृष्टि से देखा जाए तो मनुस्मृति का लेखन भी अनेक कथित शास्त्रकारों ने मिल कर इसी समय किया था, ताकि तीन चौथाई समाज स्त्री व शूद्रों को स्थाई गुलाम बना कर रख दिया जाए।

मध्य युग में स्त्रियों की स्थिति के संबंध में कतिपय बातों का उल्लेख आवश्यक है। हर्षवर्धन की बहिन 'राज्यश्री' सुशिक्षित महिला थी और उसने दिवाकर मित्र नामक बौद्ध पंडित से धर्म की शिक्षा ली थी। प्रसिद्ध ज्योतिष भास्कराचार्य (बारहवीं सदी) ने अपनी पुत्री लीलावती को गणित का ज्ञान देने के लिए. 'लीलवत' नामक पुस्तक लिखी जो संस्कृत में गणित विषयक पुस्तिका है। कवि राजशेखर की पत्नी अवंति सुंदरी अच्छी विदुषी थीं। उसने प्राकृत भाषा के एक कोश का भी निर्माण किया था, मध्ययुग में अनेक स्त्रियों ने संस्कृत काव्यों की भी रचना की। इंदुलेखा, विज्जिका, शीला, सुभद्रा, मदालसा आदि कितनी ही कवियित्रियों की रचनाओं का आभास हमें इस युग के अलंकार ग्रंथों द्वारा मिल जाता यद्यपि उनकी रचनाएं इस समय उपलब्ध नहीं हैं।

मुगल–काल में नारी की स्थिति

भारत लगभग आठ सौ वर्षों तक मुस्लिम आधिपत्य में रहा। इस अवधि के दौरान नारी की स्थिति और भी दयनीय हो गई। राजस्थान में नारी की घुड़सवारी ने पालकी का स्थान ले लिया। सुदंर नारी की प्राप्ति के लिए जितना खून–खराबा राजस्थान में हुआ, उतना देश के किसी भाग में नहीं हुआ। रूपवती नारी वरदान नहीं, यहां वह अभिशाप मानी जाती। इस युग में सुंदर नारी को राजाओं को भेंट कर दिया जाता था। हुमायूं से लेकर अंतिम मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर तक राजस्थानी राजाओं की कन्या–भेंट जारी रही। मुसलमानों के आक्रमण और अंग्रेजों के आगमन तक नारी के समस्त अधिकार छिन चुके थे। वह ताले में बंद हो चुकी थी। उसे मात्र एक बार मुंह दिखाने का अवसर दिया जाता था, जो आज तक किसी रूप में चल ही रहा है।

ब्रिटिश–काल में नारी की स्थिति

ब्रिटिश काल में विज्ञान की अच्छी प्रगति हुई। सामाजिक विकास की प्रक्रिया में ज्ञान–विज्ञान का विशेष महत्त्व है। विज्ञान की प्रगति ने मानव शरीर के बल के स्थान पर बुद्धि–बल को तरजीह दी। इससे विश्व संपर्क हुआ। दूरियां समाप्त हुईं और नारी को पुनः पूर्व सम्मानजनक दर्जा दिलाने के प्रयास प्रारंभ हुए। फलतः शिक्षा प्राप्ति से नारी के कुछ बंधन ढीले हुए। उसने समाज के हर क्षेत्र में प्रवेश किया और आज वह सफलतापूर्वक अपनी जिम्मेदारी निभा रही है।

इसी क्रम को आगे बढ़ाने, उसका विधिवत प्रयास करने एवं नारी स्वतंत्रता तथा समानता के नागरिक अधिकारों को सुरक्षा देने का महत्त्वपूर्ण कार्य संविधान निर्माता एवं परिवर्तनवादी समाज–व्यवस्था के प्रबल प्रणेता बाबा साहब डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने किया है।

स्वतंत्र भारत में नारी की स्थिति

भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात् भारतीय संविधान के निर्माता एवं वर्तमान समाज व्यवस्था के नियामक आधुनिक मनु विधिवेता बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने नारी के अंधकारमय जीवन में प्रकाश फैलाया। उन्होंने अन्याय पर आधारित एवं नारी को नरक के गर्त में ढकेलने वाली मनुस्मृति की होली जला दी यह वह समय था, जबकि भारत में अनेकों स्थानों पर नारी शिक्षा के लिए पृथक से विद्यालय खोले गए।

इस काल में नारी की छटपटाहट कुछ कम हुई। उसने कुछ राहत की सांस ली और अनेक कार्यों में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिला कर काम करने लगी, स्वतंत्र जीवन जीने लगी। सदियों की गुलामी से ऊबी भारतीय–नारी अब अपने पांवों पर खड़ी होकर स्वाभिमान से जी सकती है, यदि उसके परिवार वाले उसे उन्नति के वैसे अवसर उपलब्ध कराएं। अब वह मात्र कठपुतली नहीं रह गई है। नारी समता एवं स्वतंत्रता के प्रबल पक्षधर बाबा साहब अम्बेडकर ने इस देश के संविधान में उसे वे सभी अधिकार अधिनियम बनाकर दे दिए हैं, जिसके माध्यम से वह समता के साथ स्वतंत्रता का जीवन जी सकती है। आवश्यकता है इन अधिनियमों के आधार पर अपना अधिकार पाने की। यह कटु सत्य है कि कोई भी समाज इन अधिकारों को आसानी से तो देना ही नहीं चाहता। •

हिमायती
7 / जुलाई (द्वितीय) 2025 (कुल पृष्ठ 8)
आर. एन. आई. नं. 40611/62
प्रकाशन तिथि : 14 जुलाई, 2025

भारत में दलितों की समस्यायें और उनका निवारण

• डॉ. विजय कुमार

दलित की समस्याओं का एक लंबा इतिहास रहा है। इनकी समस्याओं का बहुत बड़ा काल धर्म से संबंधित था। जो चार युगों की समस्या है जिसे क्रमशः वैदिक ध र्म युग, पौराणिक धर्म युग और वर्तमान में हिन्दू धर्म युग कहा जा सकता है। सबसे पहले वैदिक युग में दलितों की समस्या उत्पन्न हुई थी, क्योंकि दलित वैदिक धर्म से आत्मसात् नहीं थे, इसके बावजूद वे चातुर्णिक समाज के ग्राम और नगर के सेवक थे। उन्हें इस समाज की किसी भी संस्था की सदस्यता प्राप्त नहीं थी। वे अपने को समाज के भयवश या स्वयं नियुक्त स्वयंसेवक समझते थे। समाज से स्वतंत्र रहकर अपना जीवन निर्वाह करते थे। दलितों की मूल समस्या थी, संपूर्ण समाज से उनका अलगाव या बहिष्कार। जिस कारण गांव के एकान्त में उनका वास होता था। दलित को अद्विज की श्रेणी में रखा गया था और इन्हें जनेऊ धरण करने का अधिकार नहीं था। दलितों को अपनी पहचान बताने के लिए यह आवश्यक था कि वह अपनी कलाई या गर्दन में एक काला धागा बांध कर रखे, जिससे लोग उनकी स्पर्श से अपवित्र हो जाने से बच सके। सवर्णों के सामने से दलित का गुजरना भी बड़ा कठिन होता था क्योंकि इनकी परछाई पड़ने से सवर्ण अपवित्र हो जाते थे।

भारतीय समाज के विभिन्न ग्रंथों का अध्ययन करने से यह जानकारी प्राप्त होती कि यहां के समाज में हिन्दू धर्म वर्ण व्यवस्था के आधार पर चार वर्गों में विभक्त है, जिसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र के नाम से जाना जाता है। वर्ण– व्यवस्था को सामाजिक संगठन का स्थायी आधार बनाये रखने के लिए ऋग्वेद के पुरुष सूक्त से उद्धृत किया गया है। आरंभ में वर्ण विभाजन जन्मजात नहीं था। वह एक प्रकार का श्रम विभाजन था। इसमें यह कठोरता नहीं थी जो बाद में वर्ण–व्यवस्था एवं जाति–व्यवस्था का अभिन्न विशेषता बन गयी, जिससे समाज में वर्ण–विभाजन को जन्म के आधार पर निरूपित किया जाने लगा और वर्ण के अनुसार कर्म का निर्धारण कर दिया गया। जिसमें शीर्ष स्थान ब्राह्मण को और सबसे निम्न स्थान शूद्र को दिया गया। शूदों का कार्य उपर्युक्त तीनों वर्णों की सेवा करना निर्धारित कर दिया गया और तभी से इनकी स्थिति भारतीय समाज में दयनीय हो गयी। आधुनिक काल में 'शूद्र' को ही 'दलित' के नाम से जाना जाता है, जिसका भारतीय संवैधानिक शब्द 'अनुसूचित जाति' है।

भारतीय समाज में ऐसी भी भ्रांतियां प्रचलित थीं कि दलितों के स्पर्श से वायु भी दूषित हो जाती है 'मनुस्मृति' भी दलितों के क्रियाकलाप और इनके लिए समाज में बनाये गए शोषणकारी व दमनकारी नियम की व्याख्या करता है। पेशवाओं के शासनकाल में दलितों को जमीन पर थूकने तक की मनाही थी इसलिए इनके गले में मटके बांध दिये जाते थे। पूना में दलितों को अपने कमर में झाड़ू बांधकर चलना अनिवार्य कर दिया गया था, क्योंकि उनके चलने से रास्ते का धूल साफ होता रहे और उस रास्ते से चलने वाला कोई सवर्ण अपवित्र न हो सके। सवर्णों द्वारा दलितों पर किये गये अत्याचार के विरुद्ध शिकायत करने का अधिकार भी दलितों को प्राप्त नहीं था। यदि कोई दलित शिकायत करता तो वह स्वयं ही दंड का भागीदार बन जाता था। दलितों को सवर्णों के कुओं, तालाबों और सार्वजनिक जलाशयों से पानी पीने तक की मनाही थी। यदि आवश्यकता पड़ने पर इनके द्वारा चोरी छिपे पानी पीते या निकालते हुए देख लिया जाता तो उसे बुरी तरह प्रताड़ित किया जाता था, साथ ही पूरे जलाशयों, कुओं एवं तालाबों को भी अपवित्र मान लिया जाता था। इसका स्पष्ट उदाहरण महाराष्ट्र की महाड़ स्थित चावदार तालाब है।

समाज में अस्पृश्यता अपनी चरम सीमा पर थी। किसी भी प्रकार के सामाजिक उत्सवों में दलितों को सम्मिलित नहीं होने दिया जाता था। उन्हें समाज में सभी प्रकार के अधिकारों से वंचित रखा गया था। दलितों की स्थिति समाज में कुत्ते, बिल्ली से भी बदतर थी, क्योंकि इन जानवरों को घर में चले जाने से उन्हें छूत नहीं लगती थी, किन्तु कोई दलित उनके घर किसी काम से चला जाता तो उनका घर अपवित्र हो जाता था। समाज में दलितों को अपना अच्छा नाम रखने पर भी प्रतिबंध था। उन्हें अपना नाम मात्र गंदे स्थान या वस्तु के नाम पर ही रखना पड़ता था। जब सवर्णों द्वारा किसी दलित का नाम पुकारा जाता था तो उनके नाम के अंत में अधिकतर 'आ', या 'रा' इत्यादि शब्द को जोड़ दिया जाता था. जैसे हर के हरिया, छंदी को छंदिया, बुद्ध की बुआ, गोवरा को गोवरी इत्यादि। दलितों के शव को सवर्ण जलाने तक नहीं देते थे, इसलिए भंगीयों के द्वारा एक नई प्रथा शुरू की गई थी। इसके तहत वे लोग शव को जमीन में सिर के बल गाड़ते थे, जिससे उनमें और दूसरों में अंतर दिखे। अन्य लोगों में शव को चित लिटाकर गाड़ने या जलाने की प्रथा प्रचलित थी। हिन्दू समाज व्यवस्था में जो व्यक्ति सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हैं वे आर्थिक रूप से भी पिछड़े हुए थे। समाज में दलितों की आर्थिक स्थिति अत्यंत ही चिंतनीय थी। इसका प्रभाव उनके खान–पान और वेश–भूषा से स्पष्ट दिखाई पड़ता था। इस बारे में कल्पना भी नहीं कीं जा सकती थी कि हर दिन उन्हें खाना मिल जाये। कभी जंगल के गुलर का फल खाकर अपना गुजर–बसर करना पड़ता था तो कभी–कभी वे सिर्फ पानी पीकर और पेट को रस्सी से बांधकर भूखे रह जाते थे। बलाई नामक जाति को गेहूं का आटा खाने पर भी प्रतिबंध किया गया था। दलितों को खाने में घी हलवा आदि का प्रयोग भी वर्जित था। इनको धातु के बर्तन का प्रयोग करना वर्जित था। ये मात्र मिट्टी के बर्तन का ही प्रयोग कर सकते थे। यदि कोई दलित इन प्रतिबंधित किया गया कार्य का उल्लंघन करता पाया

जाता तो उसे दंड का भागी होना पड़ता था। दलित की आर्थिक स्थिति इतनी खराब थी कि ये अपना और अपने परिवार के सदस्यों का तन ढकने के लिए सस्ते मूल्य के कपड़ा तक को नहीं खरीद पाते थे। श्मशान में फेंके गए मृतकों के कपड़ों से ही अपना तन ढका करते थे।

दलितों का शोषण समाज के सेठ साहूकार भी किया करते थे। ये लोग हड़प नीति अपनाए हुए थे। लिए गए कर्ज नहीं चुकाये जाने पर वे दलितों का सबकुछ हड़प लेते थे, फिर उनका मनचाहे ढंग से शोषण किया करते थे। पेशवाओं के शासनकाल में खोती पद्धति के तहत ब्राह्मण, दलितों को खेत फसल बोने के लिए देते थे। उनसे उपज का कुल 3/4 भाग फसल बलपूर्वक प्राप्त करते थे। दलितों को किसी भी माध्यम से धन संचय करने का अधिकार प्राप्त नहीं था। अगर वे ऐसा करते तो उनकी संपत्ति जब्त कर ली जाती थी।

सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं की तरह दलितों की अपनी धार्मिक समस्या भी थी। इनमें शिक्षा घोर अभाव था। अशिक्षा के कारण ये ग्रह, नक्षत्र, भूत–प्रेत जादू–टोना आदि अंधविश्वासों को पूर्णतः विश्वास करते थे। वे नवनिर्मित नहर, जलाशयों से सिंचाई के लिए पानी का उपयोग करने से भी कतराते थे। अंधविश्वास में जकड़े दलित समाज के अपनी निजी देवता भी होते थे। जिनकी पूजा–अर्चना वे स्वयं करते थे। वे प्राकृतिक में होने वाले आकस्मिक घटना से भी भयभीत होकर पूजा–अर्चना आदि किया करते थे। दलितों को मन्दिर प्रवेश करना वर्जित था। यहां तक कि वे मंदिर के निकट भी नहीं जा सकते थे। यदि कोई दलित उसका उल्लंघन करता तो उसे सजा दी जाती थी। उस मंदिर को भी अपवित्र मान लिया जाता था फिर मंदिर शुद्धिकरण करने के पश्चात् ही वहां लोग पूजा करते थे। मंदिरों पर ब्राह्मणों का कब्जा था। इसमें सभी पुजारी ब्राह्मण ही होते थे। वे ही पूजा–पाठ करते या कराते थे। उत्तर भारत के दलितों की यही समस्या थी। यहां उन्हें मंदिर प्रवेश तो वर्जित था ही, इसके अलावा वह भगवान की मूर्ति तक अपने घर में नहीं रख सकते थे। इन्हें पूजा करने का अधिकार नहीं होने के कारण ब्राह्मणों द्वारा प्रायः ठगे जाते थे। किसी भी दोष को दूर करने के लिए उन्हें ब्राह्मणों को दान देना पड़ता था। दान–दक्षिणा के नाम पर भी उन्हें ब्राह्मणों द्वारा शोषण किया जाता था। अधिकतर ब्राह्मण पुरोहित दलित के किसी भी संस्कार में नहीं जाया करते थे। यदि कभी कोई चाटूकार ब्राह्मण इसके घर बुलाने पर लोभवश चले भी गए तो वे पूजा–पाठ, विवाह संस्कार आदि उचित ढंग से नहीं कराते थे।

किसी व्यक्ति और समाज की सामाजिक, आर्थिक उन्नति एवं धार्मिक क्रियाकलापों को समझने के लिए शिक्षा सबसे शक्तिशाली माध्यम माना जाता है। लेकिन उच्च जातियों द्वारा प्रताड़ना के कारण इसका लाभ उठाने से वंचित रह जाते थे। भारतीय रामाज में दलितों को प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में स्थिति बहुत ही खराब थी। इन्हें शिक्षा प्राप्त करने लिए विद्यालय में प्रवेश मिल पाना बहुत ही कठिन होता था। यदि किसी तरह से प्रवेश मिल भी जाता तो यहां इनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता था।

विद्यालय में सवर्ण विद्यार्थी आगे बैठते थे। दलित विद्यार्थी इनसे दूर हटकर पीछे बैठते थे। गुजरात, महाराष्ट्र जैसे राज्यों में दलित विद्यार्थियों को कक्षा के बाहर बरामदे पर बैठाया जाता था। विद्यालय में शिक्षण कार्य केवल ब्राह्मण शिक्षक ही किया करते थे। वे इन दलित विद्यार्थियों को घृणा की दृष्टि से देखते और इनकी नोटबुक को हाथ तक नहीं लगाते थे। संस्कृत विषय का पठन–पाठन पर दलितों का कोई अधिकार नहीं था क्योंकि ऐसा माना जाता था कि दलितों को संस्कृत पढ़ने से हिन्दू धर्म भ्रष्ट हो जायेगा। प्रारंभिक शिक्षा से वंचित हो जाने के कारण दलितों की उच्च शिक्षा में स्थिति अत्यंत ही खराब थी।

भारत में 18वीं शदी तक दलितों को समस्या निवारण के लिए कोई गंभीर प्रयास नहीं किये गये थे। 19वीं शताब्दी का आधुनिक भारत पुनर्जागरण एवं सामाजिक सुधार का काल माना जाता था। इसी समय कई ऐसे महान पुरुष हुए जिन्होंने दलितों की समस्याओं के निवारण के लिए कई प्रयास किए जिनमें प्रमुख थे स्वामी विवेकानंद, शशिपंथ बंधोपाध्याय, महादेव गोविंद राणाडे, कर्नल आल्कॉट, एनी बेसेंट, महात्मा गांधी, ठक्कर बाप्पा, महाराजा साहुजी इत्यादि। इसके अलावा दूसरी तरफ वर्ण–व्यवस्था एवं जातीय व्यवस्था से पीड़ित लोग भी इस समस्या से निवारण के लिए अथक प्रयास किये जिनमें प्रमुख थे ज्योतिबा राव फूले, डॉ. भीमराव अम्बेडकर, रामास्वामी ई. पेरियार, नरायण गुरु, बिहार के गांधी जगलाल चौधरी, बाबू जगजीवन राम, बहुजन नायक मान्यवर कांशी राम, भोला पासवान, जननायक कर्पूरी ठाकुर इत्यादि ।

विभिन्न समाज सुधारकों, राजनेताओं एवं शासकों के समस्त प्रयासों के बावजूद भी 20वीं सदी तक दलितों की समस्या में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया। इनके सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर बड़े पैमाने पर अमानवीय अत्याचार किसे जा रहे हैं। भारत में आज भी हिन्दू धर्म के कुछ रक्षक या समर्थक अछूतपन, जाति भेद, वर्ण–वर्चस्व को ही धर्म संगत और आवश्यक मानते हैं। जिस कारण दलित समाज हिन्दू धर्म के इन पृथकवादी अन्यायपूर्ण तथा असमानता से परेशान होकर अपना धर्म परिवर्तन कर रहे हैं।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि जब तक हिन्दू धर्म में दलितों के मानवाधिकारों का पूरी तरह से संरक्षण नहीं दिया जायेगा, उसे समाज के सभी दशाओं से सशक्त कर, राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ने एवं राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया मे पूर्ण भागीदारी नहीं दी जायेगी तब तक भारतीय समाज में दलितों की समस्या का समाधान संभव नहीं हो पायेगा और यह समस्या बनी रहेगी।•

स्वामी, सम्पादक/ प्रकाशक एवं मुद्रक डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर द्वारा वन्दना आफसेट प्रिन्टर्स, A-9 सराय पीपलथला एक्सटेंशन, दिल्ली-33 में मुद्रित तथा रजि. कार्यालय : 233 टैगोर पार्क, माडल टाउन, दिल्ली-9 से प्रकाशित। □ सह सम्पादक एवं व्यवस्थापक - जय सुमनाक्षर, मो. 9810278936 **Email-sumanakshar@ymail.com**

नोट : हिमायती में प्रकाशित रचनाओं के लिए सम्पादक की सहमति जरूरी नहीं। हिमायती से सम्बन्धित किसी भी कानूनी कार्रवाई का क्षेत्र दिल्ली न्यायालय तक ही सीमित है।

सम्पादकीय कार्यालय : बी 3/9, दूसरी मंजिल, माडल टाउन-1, दिल्ली-110009